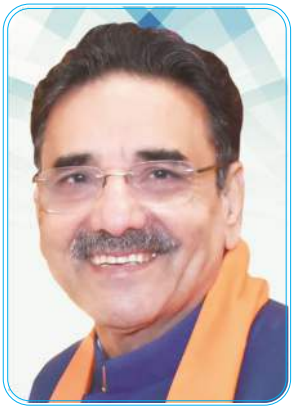
अपनों से अपनी बात...



मेरे प्रिय आत्मीय,

शुभाशीर्वाद,

वेदों में एक विशेष प्रार्थना है - **सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः, सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।**

सभी सुखी हों, सभी निरोग और स्वस्थ रहें, सभी का जीवन मंगलमय हो और शुभ के दर्शन करें। किसी भी व्यक्ति को दुःख का भागी न बनना पड़े।

जब सुख, आनन्द, आरोग्य और जगत के प्रति सरस दृष्टिकोण हमारा वेद वाक्य है तो आज हमारे जीवन में यह वेद वाक्य पूरी तरह से स्थापित क्यों नहीं हो रहा है?

उपनिषद् कहते है - **'आनन्दादेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते'** अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टि का मूल आनन्द ही है। यह भी सत्य है कि ईश्वर ने हमें एक जीवन दिया है। वह भोगने के लिये दिया है। इसीलिये शिव सूत्र में कहा गया है - **'रसो वै शिवः'** जहां शिव है वहां रस है, जहां शिव भाव है वहां आनन्द है।

जब यह कहा जाता है कि हमें वेदों और उपनिषदों का अनुसरण करना है और उसके अनुसार अपनी जीवन यात्रा करनी है तो फिर वर्तमान भारतीय समाज में दुःख, कष्ट और परेशानी को इतना अधिक महिमा मण्डित क्यों किया जा रहा है?

ऐसी मानसिकता बन गई है कि हम एक व्यक्ति का आंकलन उसकी प्रसन्नता, रचनात्मकता, सन्तुलित जीवन से नहीं बल्कि उसके द्वारा सहन किये गये कष्टों से करते है। ज्यादातर लोग गर्व से कहते है कि हमने जिन्दगी में इतना अधिक संघर्ष किया, इतने कष्ट भोगें और समाज भी यही करता है कि जिसने संघर्ष किया, जितना अधिक अपने मन की इच्छाओं का दमन किया, जितना अधिक स्वयं को भुलाकर दूसरे के लिये जिया वह उतना ही आदर्श और संस्कारी माना गया।

विचार करो, **क्या हमारे जीवन में दुःख ही संस्कार है? या हमने त्याग को ही हमारी आत्मपीड़ा से जोड़ दिया है?**

हमारी संस्कृति में त्याग का सम्मान बहुत है। पर त्याग और दुःख एक नहीं है, त्याग वह है जो स्वेच्छा से किसी उच्च उद्देश्य के लिये और आन्तरिक संतोष के साथ किया जाये। कष्ट वह है जो व्यक्ति अपनी इच्छाओं, स्वास्थ्य और आत्म सम्मान को धीरे-धीरे समाप्त कर दे। कष्ट कभी भी त्याग नहीं है यह तो आत्म उपेक्षा है, स्वयं की उपेक्षा है। ईश्वर द्वारा प्रदान किये गये महान् जीवन की उपेक्षा है।

क्या आप अपनी आवश्यकताओं की अनदेखी करते है? अपनी भावनाओं को दबाते है, वर्षों तक अपने दर्द को छिपाकर जीते है तो हो सकता है कि समाज आपकी प्रशंसा करें लेकिन आप भीतर ही भीतर टूट जाते है।

हम परिवार में मां-बाप के त्याग की कहानियां कहते है कि हमारी माता ने अपने लिये कुछ नहीं किया, केवल परिवार के लिये किया, अपने स्वप्नों का त्याग किया, पूरे जीवन केवल परिवार के लिये जीती रही। सोचों क्या आदर्श मां-बाप वही है जिन्होंने अपने अस्तित्व को पूरी तरह मिटा दिया। यदि माता-पिता अपने स्वास्थ्य का समय पर ध्यान रखते, अपनी इच्छाओं को समय पर पूरा करते तो क्या उनका मातृत्व प्रेम, पितृत्व भाव कम हो जाता? वास्तव में स्वस्थ प्रसन्न माता-पिता ही परिवार को और अधिक प्रेम और सुरक्षा दे सकते है।

बचपन से ही पुरुषों को यह सिखाया जाता है कि पुरुष रोते नहीं है, अपनी पीड़ा व्यक्त नहीं करते। हर परिस्थिति में मजबूत बनें रहते है। आप अपने ऊपर ही लागू करके देखों क्या होता है? आप अपने भीतर की भावनाओं को वर्षों तक दबायें रखते हो, बाहर से तो सफल दिखाई देते है पर भीतर ही भीतर अकेलेपन, तनाव और अवसाद से जूझते रहते हो।

परिवार में आदर्श बहु-बेटी की पहचान उसके गुणों से नहीं बल्कि उसके बलिदानों से की जाती है जो सब कुछ सहन करें उसे संस्कारी कहा जाता है। किन्तु वही महिला सम्मान पूर्वक अपनी बात रखें, अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें, अपने सपनों को पूरा करना चाहे तो उसे स्वार्थी समझ लिया जाता है।

समाज शायद इसे साहस कहे, पर वास्तविक स्थिति यह है कि **निरन्तर भावनाओं को दबाना आपके जीवन में मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार की समस्याओं का कारण बन जाता है।**

शक्ति का अर्थ, अपनी भावनाओं को नकारना नहीं है बल्कि उन्हें समझना है और स्वस्थ ढ़ंग से व्यक्त करना है।

हम बार-बार बच्चों से कहते है चाहे वह कितने ही बड़े हो जाये, मत रो, अपनी बात मत कहो, लोग क्या कहेंगे? फिर धीरे-धीरे यह व्यवहार परिवार की संस्कृति बन जाता है और वह अपने मन की बात नहीं कहता और मान लेता है कि प्रेम पाने के लिये स्वयं को कष्ट देना आवश्यक है।

हम क्या यह संदेश देना चाहते है कि प्रेम का अर्थ स्वयं को मिटा देना ही है।

यह समाज बड़ा कठोर होता है। **यह आपकी सफलता को तभी स्वीकार करता है जब उसके पीछे, अत्यधिक पीड़ा की कहानी हो। आप बुद्धिमानी, अनुशासन और सही निर्णयों के कारण सहजता से सफल हो जाये तो लोग आपकी सफलता पर संदेह करने लगते है।** सफलता का प्रमाण मात्र संघर्ष और कष्ट नहीं है। परिश्रम आवश्यक है पर कृपया अनावश्यक पीड़ा को महानता न कहें।

हमारा शरीर सत्यवादी है, जितना हम अपनी भावनाओं को दबाते रहते है, उसके कारण हमारे शरीर में विभिन्न प्रकार की व्याधियां आती है। ये व्याधियां दबे हुए भावनात्मक दर्द की अभिव्यक्ति है।

प्रत्येक व्यक्ति के लिये भावनात्मक स्वास्थ्य उतना ही महत्वपूर्ण है जितना शारीरिक स्वास्थ्य।

प्रिय साधकों सम्मान की परिभाषा बदलों, हमें उस व्यक्ति का सम्मान करना है जो परिवार से प्रेम करता है साथ ही अपने स्वास्थ्य, आत्म-सम्मान और मानसिक सन्तुलन का भी ध्यान रखता है। हमें अपने परिवार में खुलकर बात करनी है और **हमें अपनी संतानों को भी प्रोत्साहित करना है जो अपने सपनों को बिना किसी अपराध बोध के जीना चाहते है।**

आज भारतीय संस्कृति के मूल भाव को स्थापित करना है, जहां खुशी संदिग्ध न हो, आराम विद्रोह न हो और आसानी आलस्य न हो। हम त्याग का सम्मान अवश्य करें, किन्तु अनावश्यक आत्मपीड़ा का म हिमा मण्डन बंद करे। परिवार की शक्ति केवल सहनशीलता से नहीं, बल्कि संवाद, भावनात्मक स्वास्थ्य, आत्म सम्मान और परस्पर सहयोग से बढ़ती है। **आत्म सम्मान, संवाद और सन्तुलन को चुनिये, आप प्रसन्न जीवन जीयेंगे और परिवार, समाज को प्रसन्नचित्त दिशा देंगे। यही निखिल शिष्य की परिभाषा है...**

बहुत-बहुत आशीर्वाद



नन्द किशोर श्रीमाली